International Journal of Research in Social Sciences
Vol.9 Issue 11, November 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

बलदेव प्रसाद मिश्र कृत 'साकेत संत' : एक परिचय

निर्देशक
डॉ. (श्रीमती) सविता मिश्रा
दू.ब महिला स्नातकोत्तर
महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

शोधार्थी
मिनेश्वरी

सांराश – रामकथा हमारी अमूल्य धरोहर है, रामकथा का महत्व उसके पात्र जो मानव–जीवन के विभिन्न पक्षों को स्पर्श करते हैं और ऐसे आदर्श प्रस्तुत करते हैं जो मानव को सही अर्थो में मानव बनाने में सक्षम है। इस शोधपत्र में भरत का त्याग, सेवा और समर्पण की भावनाएँ का मूल्याकन किया गया है।

मुख्य शब्द – भरत, माण्डवी, साकेत संत, सर्ग, कैकेय, दशरथ, राम।

''भव में नव वैभव व्याप्त कराने आया,
नर को ईश्वरता प्राप्त कराने आया।
संदेश यहाँ मैं नहीं स्वर्ग का लाया,
इस भूतल को ही स्वर्ग बनाने आया।।''[1]

भारतवर्ष में राम–राज्य की कल्पना करने वाले मानस–मर्मज्ञ डॉ. बलदेव प्रसाद मिश्र द्विवेदी–युग के प्रमुख कवियों में से एक हैं। मिश्र जी ने साहित्य के क्षेत्र में अपनी लेखनी चलाई है। बलदेव प्रसाद मिश्र हिंदी साहिम्य के मूर्धन्य कवि थे और महावीर प्रसाद द्विवेदी के निकटतम सहयोगियों में से एक थे। मिश्र जी अपने जीवनकाल तक हिंदी साहित्य की महान सेवा की। खेद का विषय यह रहा कि मिश्र जी को हिंदी साहित्य के इतिहास में जो स्थान मिलना चाहिए था, वह स्थान नहीं मिल पाया। मिश्र जी ने रामकथा–चिंतन और रामकथा–परंपरा के क्षेत्र में अपना बहुमूल्य योगदान दिया।

''शील के महासागर का मंथन करके यदि कोई रत्न निकाला जाए तो उसकी सुषमा, निर्मलता, मनोहारिता और दीप्ति बहुत कुछ वैसी ही होगी, जैसी आचार्य बलदेव प्रसाद मिश्र के व्यक्तित्व में है। वे विग्रहवान सज्जनता है, आर्णव, आडम्बरहीनता, सौम्यता, मधुरातिमधुर, व्यवहार कुशलता और परम पभविष्णु साग्मिता, उनके पवित्र चरित्र्य के नृत्य गुणधर्म हैं।''[2]

बलदेव प्रसाद मिश्र के तीन प्रमुख महाकाव्य में दूसरा महाकाव्य 'साकेत संत' है, जो रामकथा को आधार बनाकर लिखा गया है। रामायण का प्रमुखनायक रा है, लेकिन 'साकेत संत' भरत को केंद्र में रखकर इस महाकाव्य का नायम घोषित कर दिया है। भरत का त्याग, सेवा और समर्पण की भावनाएँ इस महाकाव्य में वर्णित है।

साकेत शब्द मूलतः पालि भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ अयोध्या है, लेकिन साकेत संत अयोध्या में रहने वाले त्याग की प्रतिमूर्ति भरत हैं, जो एक संत से कम नहीं हैं। उनके मातृत्व–प्रेम, माँ के प्रति आदर और पिता के आज्ञापालन का दायित्व उन्होंने भली–भाँति निर्वहन किया।

भरत राम की आत्मा थे, जिस प्रकार शरीर से आत्मा को अलग नहीं किया जा सकता, उसी प्रकार भरत और राम को अलग नहीं किया जा सकता। 'साकेत संत' को कवि ने चौदह सर्गों में

विभाजित किया है, जिसका प्रारंभ भरत और माण्डली के वार्तालाप से आरंभ होता है और अंत राम के अयोध्या वापस आने पर भरत द्वारा राम की थाती (राज्य) सौंपने तक की घटना का वर्णन किया गय है।

प्रथम सर्ग

भरत और माण्डवी दोनों ही कैकेय पदेश जाने के लिए तैयार होते हैं, लेकिन भरत का मन उनके बंधुओं का साथ न होने के कारण उदास है पर माण्डवी के सामीपय होने के कारण उनकी उदासी थोड़ी दूर हो जाती है।

''नया परिणय था नई उमंग
माण्डवी का था नूतन संग।''[3]

भारत और माण्डनी नव दम्पत्ति हँसी–खुशी जीवन व्यतीत करते हैं। साथ ही माण्डवी के सौंदर्य की प्रशंसा भरत द्वारा किया जाता है। माण्डवी भरत से यही प्रार्थना करती है कि जीवन हमेशा सूखपूर्वक व्यतीत हो।

''इष्ट हो संतों का तप त्याग
चाहिए मुझे एक अनुराग।
शब्द की माया बुरी बलाय,
सुखी जीवन सुख से निभ जाय।।''[4]

इस प्रकार त्यागमूर्ति भरत और माण्डवी दोनों कैकय प्रदेश में नव दाम्पत्य जीवन की शुरूआत करते हुए व्यतीत करते हैं।

द्वितीय सर्ग

कैकय प्रदेश बहुत ही सुंदर तथा अलाकिक दिखाई दे रही सभी पुरवासी भरत–माण्डवी और मामा युधाजित को देखकर प्रसन्न हो जाते हैं और भरत के आगमन पर पूरे नगर को दुल्हन की तरह सजाया गया है। युधाजित तथा भरत और माण्वी के आगमन पर नाना तथा युधाजित की पत्नी आरती–थाल के साथ भरत और माण्डवी का स्वागत करते हैं। भरत और माण्डवो यह देखकर बहुत ही प्रसन्न हो जाते हैं।

भरत कैकेय प्रदेश में दिन व्यतीत करते हुए एक दिन मामा युधाजित के साथ शिकार करने चले जाते हैं। शिकार का पीछा करते भरत के हाथों एक कस्तूरी मृग का वध हो जाता है। जब भरत उस मृग को देखता है तो बहुत ही व्याकुल हो जाता है। उसे मृग की तड़प और अधिक बेचैन कर देता है, तभी युधाजित भरत को क्षत्रिय धर्म का पाठ सिखाते हैं, लेकिन भरत कहते हैं–

''पशु क्या न सजीव हमी से
पशु क्या न दया अधिकारी,
करुणा का बल अतुलित है,
क्षत्रियता जिस पर वारो।।''[5]

राजा दशरथ के समक्ष कैकेयी ने विवाह पूर्व कुछ शर्त रखी थी, जिसमें उनका जो औरस पुत्र होगा वही अयोध्या का राजा बनेगा। युधाजित भरत को समझाते हुए कहते हैं कि तुम्हें ही

अयोध्या का राजा बनना है। इस प्रकार की बातों को सुनकर भरत के हृदय बहुत आहत होता है और वह अत्यंत दुःखी हो जाता है। राशि के समय अनेक प्रकार के भयानक स्वप्न देखता है। प्रातः जब उठता है तो वह बहुत ही उदास दिखाई देता है और पुनः अयोध्या लौटने का मन में विचार करता है।

''उसी रात दुःस्वप्न भयंकर
दिखे भरत को विविध पकार
लौट चले साकेत यही वे
मन में करते रहे विचार।।''[6]

कुछ दिनों बाद मुनिवर का आदेश लेकर दूत कैकेय प्रदेश आता है और भरत अपने मन की गति से घोड़ा दौड़ाते हुए अवध की ओर बढ़ जाते हैं।

तीसरा सर्ग

जब भरत अवध में प्रवेश करता है तो चारों ओर शांत वातावरण को देखकर आश्चर्यचकित हो जाता है। वह मन–ही–मन विचार करने लगता है कि अवध में कोई अपशकुन तो नहीं हुआ। उनकी व्याकुलता बढ़ती ही जाती है। जब नगर के भीतर प्रवेश करता है तो कुत्ते शांत बैठे है, पक्षी अपने सिर नीचे लटकाए बैठे हैं, फूल मुरझा गए हैं। जब राजमहल में प्रवेश करते हैं तो कुछ लोग मुँह फेर लेते हैं और कुछ लोग घबरा कर पीछे हट जाते हैं। कोई उदास है तो कोई हँस रहा था।

राजमहल में प्रवेश किया तो चारों तरफ विषाद का वातावरण निर्मित हो गया। सभी दूत शांत मुद्रा में बैठे हुए थे, लेकिन जब रानी कैकेइ के महल में प्रवेश किया तो अलग दृश्य प्रस्तुत हुआ। जब रानी को पता चला कि भरत आ गए हैं, तो मारे खुशी के दोनों हाथों में आरती की थाली लिए राजा भरत की आरती उतारने के लिए अपन महल से निकलीं और राजा बनने की बधाई दे रहीं थीं।

''सुनते ही पहुँची वहाँ कैकेई रानी
आरती उतारी दिया अर्द्ध का पानी।
हँस–हँस कर लिपटा लिया प्रेम से बोली,
देवों ने दिया प्रसाद संभालो झोली।।''[7]

जब भरत कैकेई के ऐसे वचन के सुनते हैं तो ठाड़ सुखा जाते हैं तथा पिता को पूछते है कि राजा दशरथ कहाँ हैं ? बड़े भईया राम कहाँ हैं ? आज अवध में इस प्रकार की अशांति का वातावरण क्यों छाया हुआ है ?

''माँ कहाँ पिता है कहाँ राम सुखदाई
क्यों आज उदासी, अवधपुरी में छाई ?''[8]

भरत के प्रश्नों का उत्तर देते हुए कैकेई कहती है कि बेटा राजा दशरथ अमरपुरी (स्वर्ग सिधार) गए और राम चौदह वर्ष के लिए वन को प्रस्थान कर गए। इस प्रकार के वचन सुनकर भरत के पैरों तले जमीन खिसक गई। वह राम को देखने के लिए अत्यंत व्याकुल हो गए हैं, लेकिन राम तो वन को चले गए हैं। एक क्षण के लिए भरत वज्र के समान पृथ्वी पर गिर पड़े, चेतनाहीन हो गए। थोड़ी देर बाद होश आया तो वह कैकेई को अनेक प्रकार के उलाहना दिए तथा उनकी कटु आलोचना की।

भरत कहते हैं कि जिसे राजा बनना चाहिए वह चौदह साल का वनवास चले गए। माता सीता जो आज तक राजमहल की सुख–सुविधाओं का उपभोग कर रही थी, वह आज सेज–शिला पर चल रही होगी। उसे बार–बार अपने–आप पर ग्लानी महसूस हो रही थी। आज मेरे कारण मेरे भईया राम वन का दुःसह दुःख भोग रहे हैं। आज मैं माता कौशल्या को क्या मुँह दिखाऊँ ? वह बार–बार अपने आप को कोस रहे हैं। भरत माता कौशल्या के पास जाकर फूट–फूट कर रोने लगते हैं। माता कौशल्या भरत को समझाती हैं कि पुत्र इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं है, यह तो विधि का विधान है। उनकी मर्जी के आगे कोई क्या कर सकता है ?

इधर शत्रुघ्न जब मंथरा को देखता है तो मारे क्रोध के उसे पीटने लगता है। कौशल्या को जब सूचना मिलती है कि शत्रुघ्न उसे मार रहा है तो वह भरत को छुड़ाने भेजती हैं और कहती हैं–

''जाओ उसका त्राण करो
दया योग्य है निर्बल नारी
दासी का कल्याण करो।''[9]

आज भरत बार–बार माता कौशल्या के हृदय की विशालता को देखकर प्रणाम करते हैं कि जिनके पति तथा पुत्र उसे छोड़ कर चले गए हैं ऐसी नारी की महानता को वे प्रणाम करते हैं।

चतुर्थ सर्ग

राजा दशरथ की मृत्यु तथा भईया राम के वन चल जाने पर पूरी अयोध्या नगरी विरान हो गई। चारों तरफ सन्नाटा छा गया है। आज भरत अशांत तथा अधीर मुद्रा में विचार कर रहे हैं, तभी माण्डवी का प्रवेश होता है, वह भरत से प्रार्थना करती है–

''नम्र स्वर में वह बोली– नाथ,
बटाऊँ कैसे दुःख में हाथ
बता दो यदि हो कहीं उपाय।''[10]

माण्डवी पति की स्थिति को देखकर दुःखी हो जाती है और कहती है– हे नाथ मुझे कोई उपाय बता दो जिससे मैं आपके दुःख को हल्का कर सकूँ।

भरत कहते हैं– हे माण्डवी इस समय आपकी जरूरत उर्मिला को है। लक्ष्मण के चले जाने पर उर्मिला अकेली हो गई है। पति की आज्ञा मानकर माण्डवी चली जाती है। भरत शांत भाव से विचार करते हैं– जिसे आज जन्मसिद्ध अधिकार था अयोध्या का राजा बनने का, वही चौदह वर्ष का दुःख भोग रहा है। पिताजी की असमय ही मृत्यु हो गई। यह कैसा विधि का विधान है ? आजा बार–बार भरत अपने को कोसते हैं। आज मेरे भईया को चौदह वर्ष का वनवास हो गया, मेरे कारण पिता की मृत्यु हो गई। फिर विचार करते हैं पिता को स्वर्ग से वापस नहीं लाया जा सकता, लेकिन भईया को वनवास से वापस तो लाया जा सकता है। वह मंत्रियों को आदेश देते हैं कि मंत्रीपरिषद की एक बैठक बुलाकर निर्णय लिया जाए कि राम को वाप अयोध्या का राजा बनाया जाए।

पंचम सर्ग

राजा मंत्रणागार में सभी विभाग के अधिकारी, सचिव, प्रभुता, समस्त गणमान्य नागरिकों को सभा में बुलाया गया। भरत, शत्रुघ्न, सभी माताएँ उपस्थित हुईं। आज किसी के मुख पर मुसकान

नहीं, सभी उदास होकर बैठे हैं, तभी गुरु वशिष्ठ ने कहा– प्रभु की मर्जी के आगे किसी का बस नहीं चलता है। शरीर तो नश्वर है, निष्प्राण है, अम समय बीतता चला जा रहा है। राजा के शव की अंत्येष्ठि–क्रिया विधि–विधान से करना पड़ेगा। राजा की मृत्यु उपरांत यहाँ पर कोई पुत्र उपस्थित नहीं थे, इस कारण उनकी अंत्येष्ठि–क्रिया संपन्न नहीं हो पाई थी। अब भरत के आ जाने पर यह संस्कार भरत को करना पड़ेगा तथा राज–पाठ को भी उन्हीं को संभालना पड़ेगा–

''रहे भरत निस्तब्ध न कुछ भी बोले चले
तन पर थी जंजीर और मुख पर थे ताले।
मुनि ने देखा भाव और परमार्थ कथायें,
लगे सुनाने जो कि भेद दें हृदय व्यथाएँ।।''[11]

गुरु के वचनों का भरत पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा, वह तो अपने आप को दोषी मानते हुए कहता है– अयोध्या का राजा तो राम है, मैं तो उनका सेवक मात्र हूँ। मैं भईया के चरण पकड़ कर विनती करूँगा कि अयोध्या लौट चलें। भरत के ये वचन सुनकर सभा में उपस्थित सभी लोग आनंदित होकर उनका स्वागत किए। सहसा ही सभा–स्थल पर कैकेई मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ी। भरत उनको उठाकर उनके महल में ले गए, फिर राजमहल में श्मशान की भाँति उदासी छा गई।

''संभाला ले गये मां को भरत जी,
मिटी पल में सभी हलचल भवन की,
जुड़े थे जिस जगह यों अवध वासी,
श्मशानों सी वहां छाई उदासी।।''[12]

षष्ठ सर्ग

सवेरे होते ही कैकेई अकेली गुरु वशिष्ठ के आश्रम की ओर चली जाती है। सब लोग इस दृश्य को देखकर आश्चर्यचकित हो जाते हैं। लोग विचार करते हैं कि अब कैकेई और क्या कुकर्म करने वाली है। सभी कैकेई को देखकर गुरुमाता अरुंधती घर का काम निपटा कर कैकेई को गुरु वशिष्ठ के पास ल जाकर आने का कारण पूछती है। कैकेई पूरा वृतांत बताती है और अपेन किए गए कुकर्मों का पश्चाताप करने लगती है। उनके नेत्रों से आँसू की धार बह रही है, तभी गुरु विशष्ठ ध्यान–मुद्रा से उठकर कैकेई को समझाते हैं कि विधि के विधान के आगे हम सब नतमस्तक हैं। राम और भरत के द्वारा ही इस सृष्टि का कल्याण निहित है, जो होगा मंगलमय होगा तुम चिंता मत करो। लेकिन कैकेई के मन में शांति नहीं थी, उसने अपने मन में विचार कर लिया कि अब मेरे पास सती होने के सिवाय और कोई उपाय नहीं है। इधर राजा के मृत शरीर को नदी के तट पर लाया गया है, विशाल जन–समूह इस क्रिया–कार्य में उपस्थित है। छोटे–बड़े, अमीर–गरीब, साधु–भिक्षुक, राजा–रंक सभी लोग वहाँ पर इकट्ठा हुए हैं। इतने में दूर से माता कैकेई रथ पर सवार होकर आते हुए दिखाई देती है। सब फिर सोचने लगे कि अब रानी फिर क्या कुकर्म करने वाली है, तभी कैकेई का सती रूप देखकर सब आश्चर्यचकित हो गए। कैकेई को भरत के सिवाय कोई नहीं समझा सकता था।

भरत ने जब देखा तो वह अपने व्यंग्य–बाणों से कैकेई को वहाँ से हट जाने के लिए कहा। भरत के ऐसे व्यंग्य–वचन सुनकर माता कैकेई के पैरो तले जमीन खिसक गई। वह विलाप करती

हुई पश्चाताप की अग्नि में जलती जा रही थी और अपनी गलती स्वीकार करती है। भरत माता के सच्चे पश्चाताप को सुनकर उन्हें क्षमा कर दिया और सती होने से रोक दिया।

''बढ़ी रानी पुनः रोका भरत ने
चरण पकड़े जननि के शोलव्रत ने
कहा– हूँ आज तुमसे धन्य माता।
सुखी मुझसा न कोई अन्य माता।।''[13]

सप्तम सर्ग

भरत वन की ओर प्रस्थान करने की तैयारी कर रहे हैं। चारों तरफ राम की ही चर्चा सुनाई दे रही है। कोई राम को राजा मान रहे तो कोई भरत को। जन–समुदाय में विभेद हो जाने के कारण विद्रोह की स्थिति निर्मित हो रही है। नगर रक्षक जन–समुदाय की बातों को सुनकर मुस्कुरा रहा है। नगर रक्षक को पहुँचने पर वह उत्तर देता है– मैं तो राजा की आज्ञा का पालन करने वाला एक यंत्र मात्र हूँ, राजा का पद किसे मिलेगा यह तो राजकुल ही जान सकता है। श्रीराम और भरत में किसी प्रकार का अंतर नहीं है, दोनों के शरीर दो हैं पर आत्मा एक है।

''राम मेरू हये भरत कैलास है,
कौन दोनों में हमारे पास हैं।
भूप को हम 'देव' ही जाना किये,
देव का आदेश नर माना किये।।''[14]

भरत नगर की व्यवस्था को देखने निकलते हैं। भरत के मन में एक ही बात बार–बार आ रही है, कोई कुछ भी कह ले अयोध्या के राजा राम हैं। कोई साथ दे या न दे, मैं अपने भईया राम का ही साथ दूँगा।

''किन्तु यदि कोई न मेरा साथ दे,
क्या हुआ मुझको न कोई हाथ दे।
मैं अकेला ही हृदय को थाम के,
शरण माँगूगा दयामय राम से।''[15]

प्रातःकाल भरत के साथ नागरिकों की विशाल सेना वन जाने के लिए उमड़ पड़ता है। जिस प्रकार समुद्र की लहरें हिलोरे लेने लगते हैं, उसी प्रकार अयोध्या की प्रजा की स्थिति हो गई। रथ, हाथी, घेड़ा, ऊँट कतारबद्ध सड़क पर खड़ी थी। गुरु वशिष्ठ ने शंख–ध्वनि की और भरत के नेतृत्व में पूरे नागरिकों का दल शृंगबेरपुर की ओर प्रस्थान किया। सभी लोग उत्साह के साथ बिना किसी क्षण विश्राम किए लगातार चल रहे हैं।

अष्टम सर्ग

श्रगबेरपुर की स्थिति के बारे में बताया गया है कि लोग किस प्रकार अपना जीवन यापन करते थे। कोल–भील की बस्ती थी, निषादराज उस बस्ती का मुखिया था। लाग अपना जीवन टूटी–फूटी झोपड़ियों में बिताते थे। रहने के लिए मकान नहीं था, जो भी जंगलों में खाने को मिलता था उसी से

उनकी दिनचर्या चलती थी। राम जब शृंगबेरपुर में पड़ाव डाले थे, तब यही कोल–भील प्रभु की सेवा के लिए तत्पर हो गए। श्रीराम के मन में किसी के लिए घृणा का भाव नहीं था, सबके हृदय में राम–ही–राम समाया था।

''वे राम बसे हैं जो मन में
जादू था जिनकी चितवन में।''[16]

ये लोग अत्यंत निर्धन, असहाय होने के बाद भी किसी के प्रति छल–कपट नहीं करते थे। यदि कोई लड़ाई–झगड़ा भी हो जाता तो गाँव में ही झगड़ों का निपटारा कर लिया करते थे। राम तो जगत के पालनहार हैं। उनका धरती पर अवतार इसीलिए हुआ है कि सब का कल्याण हो सके। राम ने निषादराज केंवट को मित्रवत प्रेम करते हुए उनका आतिथ्य स्वीकार किया।

जब निषादराज केंवट एक उत्सव की तैयारी कर रहा था, उसी समय उसे आकाश में अचानक धूल उठने का संकेत मिला और हव देखा कि श्रीरमा के भ्राता भरत पूरी सना के साथ शृगबेरपुर के निकट आ गए हैं। उन्होंने अपने अल्पबुद्धि से अनुमान लगाया कि यदि भरत राम से मिलने आते तो पूरे सैनिकों को क्यों लाते, भय के कारण वह अपने सैनिकों को निर्देश करता है और प्रतिकार करने की आज्ञा दे दी। जब भरत के सैनिकों ने इस प्रकार की स्थिति को देखा तो उनके अंदर भी उत्तेजना जागृत हो गई और वाह लड़ने के लिए तैयार हो गए, लेकिन भरत ने वस्तुस्थिति से अवगत होकर अकेले निषादराज से मिलने का निश्चय किया। जब निषादराज को पता चला कि भरत अकेले आ रहे हैं, तब वह बिना विलंब किए भरत क समक्ष निःस्वार्थ भाव से हाथ जोड़कर खड़े हो गए। भरत ने निषादराज को गले लगाकर एक–दूसरे कुशलता पूछा। निषादराज ने बिना विलंब आदेश दिया कि अयोध्यावासियों के रहने की उचित व्यवस्था की जाए। दोनों प्रेम में मगन हो गए। भरत बार–बार निहार रहे हैं कि भइया राम कहाँ पर चले होंगे, कहाँ पर बैठे होगे, उनकी आँखों से अश्रु की धार बह रही है। निषादराज दूसरे दिन सभी साकेतवासियों को गंगा पार करा दिया। वहाँ से भारद्वाज मुनि का आश्रम दिखाई देने लगा और सब–के–सब वहाँ चले गए। सबके मन में अपार अनुराग जाग्रत हो रहा है–

''पहुँच गये उस पार सभी जब
भरत हुए विश्रांत हृदय तब।
भरद्वाज आश्रम लख आगे,
सब के सब मन में अनुरागे।''[17]

नवम सर्ग

भरत निषादराज केंवट तथा सैन्य–बल के साथ गंगा पार कर भरद्वाज मुनि के आश्रम में पहुँचे। वह आश्रम प्रयाग के समान पावन–पवित्र था। आश्रम विश्वविद्यालय के समान अति सुंदर लग रहा था, जहाँ देश–विदेश के विद्यार्थी शास्त्र–ज्ञान प्राप्त करेन के लिए आए हुए थे। वहाँ का वातावरण इतना मनोरम था कि पशु–पक्षी भी वेद–उपनिषद का पाठ किया करते थे। कवि मुनि के आश्रम और झोपड़ियों की तुलना करते हैं कि एक तरफ मास–मदिरा चल रहा है और दूसरी ओर वेद–उपनिषद का पाठ चल रहा है। मुनि के आश्रम में ज्ञान की अमृतधारा प्रवाहित हो रही थी।

मुनि भरद्वाज ने अपने तपोबल से धरती को स्वर्ग में परिणित किया था। भरत रात्रि विश्राम मुनि के आश्रम में करने का विचार करते हैं। मुनि ने भरत के आने का कारण पूछा। भरत कहते हैं–

''सेवक हूँ मैं नाथ ! कृपा की
सुख की चाह न कोई बाकी,
इच्छा एक कि प्रभु फिर आवें,
अपना अवध पुनः अपनावें।''[18]

भरद्वाज मुनि भरत की बातों को सुनकर भाव विभागर हो गए और राम से मिलने का रास्ता बता दिया। साथ ही रात्रि विश्राम करने के लिए व्यवस्था की और षड्रस व्यंजन तैयार कर स्वर्ग की अप्सरा रम्भा और उर्वशी को अवध के नागरिकों की सेवा में तत्पर कर दिया, लेकिन भरत का मन तो प्रभु राम में था। वह रात्रि केवल जल पीकर व्यतीत किए। भरत के त्याग और सेवा भाव को देखकर मुनि चकित हो गए। मुनि ने भरत को कार्य–सिद्ध होने का वरदान दिया। भरत मुनि से आशीर्वाद लेकर चित्रकूट की ओर प्रस्थान करते हैं। वे बार–बार राम को याद कर–कर व्याकुल हो जाते हैं, कभी मूर्च्छित हो जाते हैं।

दशम सर्ग

कवि ने इस सर्ग में चित्रकूट के मार्ग में जाने पर जो कठिनाइयाँ आती हैं, उनका वर्णन किया है। वन अति भयंकर लग रहा है, हर पग में विपदाएँ थीं। कहीं टीले थे जो रास्ता रोक रही थीं तो कहीं बड़े–बड़े गड्ढे थे, जिससे लाग इधर–उधर भअक रहे थे।

''गहन वन अति भयंकर सामने था–
विपद का क्रूर आकर सामने था
कहीं टीले की जो पथ रोक अटके,
कहीं गड्ढे कि जिनमें लोग भटके।''[19]

रास्ता अत्यंत दुर्गम था, बड़े–बड़े शेर–भालू थे, लेकिन भरत को इनका भय बिल्कुल नहीं था। उनका ध्यान ता प्रभु श्रीराम के चरण–कमलों में था। वे सोच रहे थे कि वह स्थान कितना पावन–पवित्र होगा, जहाँ मेरे प्रभु राम अपनी झोपड़ी बनाकर रह रहे होंगे। आज भरत को अंगारे भी सुहाने लग रहे थे। खुले पैर पैदल चले जा रहे हैं, ग्रामीण लोग भरत को देखकर अत्यंत आनंदित हो जाते हैं और वे भरत को राम का ही एक प्रतिरूप समझ रहे हैं। भरत बार–बार प्रभु को याद कर रहे हैं तथा सोच रहे हैं कि कैसे मैं पभु का सामना करूँगा। भईया मुझे लोभी समझकर मेरा त्याग तो नहीं कर देंगे ? अनेक भावनाएँ उनके मन में आ–ज रहे हैं।

इस प्रकार गहन वन को पार करते हुए भरत अत्रि मुनि के आश्रम में पहुँच जाते हैं। वहाँ से चित्रकूट का पाव स्थल दिखाई दे रहा है। भरत को राम का स्वरूप दिखाई देने लगा, वह वहीं पर मूर्तिवत जड़ हो जाते हैं।

एकादश सर्ग

संध्या हो जाने के कारण सभी लोग सममतल स्थान दखकर अपना शिविर तान लेते हैं। रात्रि में अयोध्यावासियों की सभा आयोजित हुई, जिसमें सभी प्रकार की चर्चा हुई। राम को अयोध्या वापस लौटने का सभी का मत था, किंतु नृपति का वरदान इसमें बाधा उपस्थित कर रहे थे। सभी लोग यही सोच रहे हैं कि कैसे विचार किया जाए कि राजा का वरदान भी न टूटे और श्रीराम अयोध्या को लौट जाएँ। वशिष्ट का मत था कि अयोध्या को वन बना दिया जाए और वन को अयोध्या बना दिया जाए। भरत इस प्रकार गुरु की बातों को सुनकर बहुत ही खुश हो जाते हैं–

''खिल उठे भरत, कह उठे अहा ! सुन्दर हल !
निश्चयपूर्वक, बस, यही रहे चर्चा कल।
प्रस्तुत हूँ मैं वन हेतु, राम फिर जावें,
हम लोग यहीं बस जायें, यही सुख पावें।।''[20]

माताओं ने गुरु की बातों को भरत को बताया कि भरत गुरु वशिष्ठ जी ठिठौली कर रहे हैं। आपको चाहिए कि आप स्वयं जाकर राम से अयोध्या वापस चलने का निवेदन करें। वशिष्ठ जी भी यही कहते हैं कि राम को हम सभी ने अपने–अपने हिसाब से समझा लिया है, अब राम को केवल भरत ही समझा सकते हैं। भरत रात्रि में बहुत ही व्याकुल हैं, वे बार–बार यही सोच रहे हैं कि कब सुबह हो और प्रभ् राम का दर्शन हो।

प्रातःकाल गुरु वशिष्ठ और शत्रुघ्न को साथ लेकर भरत राम से मिलने चले गए। राम को पहले से ज्ञात हो गया था कि भरत मुझसे मिलने आ रहा है, वह बहुत ही व्यकुल होकर भरत की प्रतिक्षा कर रहे हैं। राम भक्तों के हृदय को भली–भाँति जान जाते है, उन्होंने भरत के आंतरिक भावों को पहले से ही समझ गए थे। दोनों का मिलन इतनी शीघ्रता से हुआ जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। भरत ने राम को भईया शब्द से पुकारा जिसे देखकर गुरु वशिष्ठ और शत्रुघ्न आनंद विभोर हो गए। राम और भरत ऐसे मिल रहे है जैसे जीव को परमात्मा मिल गया हो। राम भरत से मिलने के बाद गुरु वशिष्ठ तथा शत्रुघ्न से मिलते हैं और भरत माता सीता तथा लक्ष्मण से मिलने और सभी आनंद में डूब जाते हैं।

चारों भाइयों की गुप्त वाता प्रारंभ हुई, तभी माता सीता जलपान के लिए निवेदन करती है, लेकिन गुहाराज निषाद कहता है कि आज पूरे अयोध्यावासियों को मेरे द्वारा भोजन का प्रबंध किया जाएगा और वह पूरे साकेतवासियों के लिए भोजन की व्यवस्था करता है। तभी राम उस शिविर की ओर जाते हैं जहाँ पूरे अयोध्यावासी रूके हुए हैं। माता कौशल्या, कैकेइ और सुमित्रा ने उनका स्नेहवश स्वागत किया और उनका हृदय राम को देखकर गद्‌गद हो गया।

तभी गुरु वशिष्ठ जी ने राम को सूचना दी कि राजा दशरथ का स्वर्गवास हो गया। आनंद की स्थिति दुःख में परिणित हो जाती है और राम के साथ सभी लोग राजा को तिलांजलि अपित करने सुर सरिता के निकट पहुँच जाते हैं। समय व्यतीत होता जा रहा है, भरत का मन बहुत ही व्याकुल है, वह सोच रहे हैं कि किस प्रकार मैं भईया राम को अयोध्या लौटने का निवेदन करूँ, फिर स्वयं विचार करते हैं कि प्रभु कोई–न–कोई रास्ता स्वयं निकालेंगे।

द्वादश सर्ग

राजा जनक को गुप्तचरों से सूचना मिली की भरत पूरे सैनिकों के साथ चित्रकूट गए हैं, उन्हें बहुत ही चिंता हुई। वे जानते थे कि चारों भाइयों में बड़ा प्रेम है, किंतु सत्ता का लोभ कोई अनिष्ट न करा दे, इसलिए वे पूरा सैनिक–बल लेकर राम के रक्षार्थ चित्रकूट की ओर प्रस्थान करते हैं। जब राजा जनक चित्रकूट पहुँचे तो ज्ञात हुआ कि राजा दशरथ का शरीरांत हो गया तथा भरत के शुद्ध भ्रातृत्व प्रेम तथा रानी कैकेई के पश्चाताप ने राजा के मन की शंका को दूर कर दिया।

राजा जनक ने कहा– रानी ककेई ने जो वरदान लिया था उसे त्याग दिया है, अब तो राम को कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। माता का स्थान पिता की अपेक्षा अधिक ऊँचा होता है इसलिए राम को अब पिता के वचनों का पालन करने के साथ–साथ माता के वचनों का भीपालन करना चाहिए।

कैकेई पश्चाताप को अग्नि में जल रही है। उन्होंने राम को वापस अयोध्या चलने के लिए सीता तथा लक्ष्मण के समक्ष आई। उधर राम राजा जनक से भेंट करने के बाद अपनी कुटिया की ओर जा रहे थे, उसी समय भरत ने राम को एकांत पाकर उनसे प्रश्न किया–

''प्रभो क्या है जीवन का मर्म
इधर है हृदय उधर मस्तिष्क
इधर है प्रेम उधर है कर्म।''[21]

एक पल प्रभु राम भरत के प्रश्नों के भावों को समझ गए तथा उसे अपने सीने से लगा लिया और वृक्ष के नीचे शिला पर बिठाते हुए सृष्टि कल्याण का मर्म समझाने लगे। अनेक प्रश्नों को सामने रखकर राम ने भ्ज्ञरत को शिक्षा दिया। चौदह वर्ष तक राज्य कैसे चलाना है, संसार के समस्त प्राणियों के प्रति प्रेम की भावना कैसे रखा है, एक राजा को किन–किन बातों को ध्यान देना चाहिए, जैसे अनेक प्रकार के बातों की शिक्षा दी। राम ने भरत से कहा– हे भरत तुम उत्तर भारत का नेतृत्व संभालो और मैं दक्षिण भारत में एका स्थापित करता हूँ। राम के वचन सुनकर भरत की आँखों से अश्रु बहने लगे–

''भरत जी यह सुन विह्वल हुए
दृगों से बह अश्रु की धार।''[22]

राम कहते हैं भरत तुम व्यथित क्यों होते हो, जो तुम कहोगे निसंदेह मैं वही करूँगा और रघुवर कुछ समय मौन होकर भरत के सिर पर हाथ फेरते हुए प्रेम और कर्त्तव्य के बीच संघर्ष की व्याख्या समझाते हैं। इतने में ही कुछ वनवासी कंद, मूल, फल लेकर वहाँ पर आ जाते हैं और सभी लोग प्रभु राम का जय–जयकार करते हुए आगे बढ़ जाते है, क्योंकि प्रभु राम ने ही उन सब वनवासियों को पशुतुल्य से मुक्त किया था।

त्रयोदश सर्ग

संध्या का समय था, आकाश में आँधी उठ रही थी। जंगल के पशु–पक्षी भीषण कोलाहल कर रहे थे। शिविर में हाकाकार मचा हुआ था। कुछ समय बाद वातावरण शांत हुआ और सभा का आयाजन हुआ, जिसमें किसी निर्णय पर पहुँचना बहुत जरूरी हो गया था। फिर चित्रकूट में ऋषि–मुनियों के साथ गुरु वशिष्ठ, राम, भरत उनका पूरा परिवार सभा स्थल में पहुँचे और सभा आरंभ हुई। कैकेई

बार–बार अपने आप को दोषी मान रही है। वह पश्चाताप की अग्नि में जल रही है। वह राम का बुलाने भेजती है। राम के समक्ष अपनी हृदय की वेदना को प्रकट करती है–

''मैं हतभगिन अब क्या मांगू,
मांग मांग कर सेंदूर मेरा
विनय यही है अब हम सबकी
लाज तुम्हारे हाथों बेटा।
चलो दया का अवध भरत को
प्राणों का मिल जाय सहारा।।''

माँ के वचनों को सुनकर राम कहते हैं– तुम मेरी माता हो, जो आज्ञा दोगी मुझे स्वीकार है। वे कहते हैं वे वही करेंगे जो भरत कहेगा। सभा में उपस्थित सभी ऋषि–मुनियों ने भी अपना मत प्रस्तुत किया। जाबाली ऋषि ने कहा– राम को राजलक्ष्मी का त्याग नहीं करना चाहिए। वैदेही को कोई कष्ट नहीं होना चहिए। अत्रि मुनि ने कहा– अपने सुख तथा दुःख पर वैदेही स्वयं निर्णय ले सकती है। नियम तो यह कहता है कि भरत स्वयं राम को मनाने वन आए हैं इसलिए राम को इंकार नहीं करना चाहिए।

जनकराज विदेह भी सभ ऋषि–मुनियों की बातों का समर्थन करते हुए राम से कहते हैं कि पिता के आदेशों का पालन कर गृह स्थिति नियंत्रित हुई। अब माता के वचन का पालन कर शासन के संचालन करना राम का दायित्व है। राम ने कोमल वाणी से कहा– मैं नीतियों का पालन करूँगा। अंत में गुरु वशिष्ठ ने कहा– हमस ब का एक ही विचार है कि अब भरत जो कहेगा हम सब उसका पालन करेंगे।

भरत की आँखों में अश्रु प्रवाहित हो गए। आज भरत के सामने विकट समस्या उत्पन्न हो गई है। एक ओर कर्त्तव्य है तो दूसरी ओर प्रेम। राम से बातचीज के बाद से ही वह सोच रहा है कि प्रभु राम की इच्दा का अनुकरण करना चाहिए। कर्त्तव्य को सर्वोपरि मानकर भरत ने कहा– प्रभु की इच्छा ही सर्वोपरि है। राजा राम की इच्छा है कि मैं चौदह वर्ष तक विरहातुर जीवन व्यतीत करूँ। मैं पभु के इस आदेश का आत्मसमर्पण करता हूँ। अयोध्या का राज्य राजा राम का है। मैं चौदह साल तक राजा राम की आज्ञा से शासन का संचालन करूँगा। भरत के इस प्रकार के निर्णय सुनकर सभी लोग भाावविभोर हो गए। आज राम जीतकर भी हार गए और भरत हार कर भी जीत गए।

प्रेम और कर्त्तव्य के आगे दोनों भाई अपने–अपने दायित्व का निर्वाह करते हुए शासन की बागडोर भरत को सौंप दिया। चित्रकूट की इस सभा में अखण्ड भारत का सपना साकार करने के लिए रूपरेखा बनाया गया ओर सभा समाप्त हुई। भरत राम के खड़ाऊ को लेकर चौदह साल तक उनकी सेवा में अपना जीवन बीता दिया।

सभी साकेतवासी अयोध्या लौट आए। भरत ने अपनी जीवनचर्या ही बदल दी तथा एक तपस्वी की भाँति चौदह साल तक तप करते हुए अयोध्या का राज्य संभाला।

चतुर्दश सर्ग

यह 'साकेत संत' का अंतिम सर्ग है। चित्रकूट से लौटने के बाद भरत के जीवन में परिवर्तन हो गया। राम–राज्य की कल्पना साकार करने के लिए एक तपस्वी को भाँति नंदीग्राम में कुटि

का निर्माण करके प्रभु राम की पादुका को शिरोधार्य करके उनकी दिन–रात सेवा करते हुए शासन की बागडोर संभाला। ब्रह्म मूहूर्त में उठकर पादुका पूजन करते थे। प्रथम पहर में नगरवासियों से सुख–दुःख की चर्चा करते थे। द्वितीय पहर में मंत्रियों तथा सचिवों से मिलकर शासन–व्यवस्था पर विचार करते हैं। तृतीय प्रहर में माण्डवी के सेवाव्रत को स्वीकार करते और थोड़ा विश्राम करते। चतुर्थ प्रहर में रराज्य के विभिन्न स्थानों का भ्रमण करते।

इसी प्रकार उपासना रात्रि को प्रथम प्रहर में गुप्तचरों से चर्चा, द्वितीय तथा तृतीय प्रहर में शयन करते हुए सेवाव्रत नियमों का पालन करते हुए भरत ने अयोध्या की बागडोर संभाली। कहा जाता है कि चौदह साल तक अयोध्या में किसी प्रकार का युद्ध नहीं हुआ। सभी जगह शांति व्यवस्था थी।

एक दिन भरत भ्रमण के लिए निकले थे, तभी उनको एक उल्कापींड आकाश में जाते हुए दिखाई दिया। भत ने उसे शत्रु जानकर उस पर अपना ठुठवा बाण का प्रहार कर दिया। वह राम–राम कहकर पृथ्वी पर गिर गया। जब भरत ने राम शब्द को सुना तो वह बहुत व्याकुल हुए। भरत ने हनुमान का उपचार किया तत्पश्चात् हनुमान ने राम–रावण युद्ध का समाचार भरत को सुनाया। भरत कुछ क्षण के लिए व्यथित हो गए तथा राम की रक्षा के लिए लंका जाने को तैयार हो गए, लेकिन वशिष्ठ जी की दिव्य–दृष्टि से ज्ञात होता है कि राम की शक्ति अति व्यापक है वह रावण पर अकेले विजय प्राप्त कर सकते हैं।

चौदह वर्ष व्यतीत हो जाने पर हनुमान ने राम आगमन का संदेश भरत को सुनाया और राम की थाती भरत प्रसन्नता के साथ राम को सौंप देते हैं।

इस प्रकार 'साकेत संत' एक तपोनिष्ठ, त्यागमय, कर्तव्यनिष्ठ, सच्चे भाई की अमर कृति है। भरत का चरित्र भारतवर्ष में एक अप्रतिम है। एक आदर्श भाई, एक आदर्श राजा, आदर्श सेवक के साथ–साथ एक आदर्श पति के रूप में भरत का चरित्र दृष्टिगत होता है। इस प्रकार डॉ. बलदेव प्रसाद मिश्र द्वारा रचित 'साकेत संत' अपने आप में साहित्य जगत में उल्लेखनीय स्थान रखता है।

संदर्भ–सूची

1. गुप्त, मैथिलीशण. साकेत. लोकभारतीय प्रकाशन, 2016, पृ. 124.
2. अभिनंदन ग्रंथ : डॉ. बलदेव प्रसाद मिश्र व्यक्तित्व एवं कृतित्व. राजनांदगाँव : डॉ. मिश्र अभिनंदन समिति, 1963, पृ. 84.
3. मिश्र, बलदेव प्रसाद. साकेत संत. नई दिल्ली : विद्या मंदिर लिमिटेड, 1946, पृ. 20.
4. वही, पृ. 27.
5. वही, पृ. 37.
6. वही, पृ. 43.
7. वही, पृ. 45.
8. वही, पृ. 50.
9. वही, पृ. 53.
10. वही, पृ. 55.

11. वही, पृ. 67.

12. वही, पृ. 73.

13. वही, पृ. 82.

14. वही, पृ. 85.

15. वही, पृ. 90.

16. वही, पृ. 96.

17. वही, पृ. 103.

18. वही, पृ. 108.

19. वही, पृ. 114.

20. वही, पृ. 127.

21. वही, पृ. 140.

22. वही, पृ. 147.

23. वही, पृ. 162.